कबीर जयंती के आयोजन की प्रासंगिकता:

अंधविश्वास व पाखण्ड से मुक्त होकर कबीर की तरह निर्भीक व सत्यान्वेषी बनने में ही है वास्तविक आध्यात्मिकता

-सीताराम गुप्ता

शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार के बावजूद आज पूरे विश्व को अंधविश्वास व पाखंडों ने बुरी तरह से जकड़ रखा है। तथाकथित आधुनिक व उच्च शिक्षित समाज भी इसके चंगुल से मुक्त नहीं। इसका विरोध भी कम नहीं होता। कुछ लोगों के लिए कर्मकाण्ड और अंधविश्वास बहुत अच्छा व्यवसाय है अतः वे किसी भी क़ीमत पर समाज को इससे मुक्त नहीं होने देना चाहते। जो लोग समाज से अंधविश्वास की समाप्ति करके समाज को नई दिशा देना चाहते हैं उनको अपनी जान तक से हाथ धोना पड़ता है। इसके अनेक प्रमाण हमारे सामने हैं। कबीर ने मध्य काल में अंधविश्वास और पाखण्ड का जितना विरोध किया वह अद्वितीय है। कबीर न केवल एक महान संत, कवि व चिंतक थे अपितु एक प्रखर क्रांतिकारी समाज सुधारक व आडंबर के घोर विरोधी भी थे। इसके लिए उन्हें सत्ता व मठाधीशों का कोपभाजन भी बनना पड़ा। धर्म-अध्यात्म के नाम पर प्रचलित आडंबर का कबीर ने डटकर विरोध किया। उन्होंने हिंदू व मुसलमान दोनों को उनके पाखण्ड के लिए फटकारा। उस समय के अनुसार यह एक अत्यंत क्रांतिकारी क़दम था जो आज भी संभव नहीं लगता। बोलकर तो देखिए किसी धर्म अथवा मठाधीश के आडंबरों व ज़्यादतियों के विरुद्ध। कबीर ने मूर्तिपूजा का भी स्पष्ट रूप से खंडन किया है। कबीर कहते हैं:

पाहन पूजे हरि मिले तो मैं पूजूँ पहाड़,
उससे तो चक्की भली पीस खाय संसार।

लेकिन विडंबना तो देखिए कि जिस कबीर ने मूर्ति पूजा का खण्डन किया आज लोगों ने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए उनके मंदिर बना कर उनकी मूर्तियाँ स्थापित कर दी हैं और उनकी पूजा भी करने लगे हैं। साईं बाबा के संदर्भ में भी यही बात कही जा सकती है। स्वयं कबीर के बारे में एक ऐसी भ्रांति भी आज तक जन-मानस में प्रचलित है जिसका किसी ने खंडन नहीं किया। पोंगापंथी तो खैर क्या खंडन करते विद्वानों ने भी नहीं किया।

सब जानते हैं कि हिंदू और मुसलमान दोनों उनके शिष्य थे। हिंदू उन्हें हिंदू तथा मुसलमान उन्हें मुसलमान मानते थे। उनकी मृत्यु पर हिंदुओं ने कहा कि वे कबीर का दाह संस्कार करेंगे और मुसलमानों ने कहा कि वे उन्हें दफ़नाएँगे। जब उनकी मृत देह से चादर हटाई गई तो उनके शव की जगह पर फूलों की एक ढेरी मिली। हिंदुओं और मुसलमानों ने उन फूलों को आधा-आधा बाँट लिया। हिंदुओं ने अपने आधे फूलों का दाह संस्कार कर दिया और मुसलमानों ने आधे फूल दफ़ना दिए। ये बात अपनी जगह दुरुस्त है कि कबीर साहब हर बुराई के विरोधी तथा हिंदू-मुस्लिम एकता के पक्षधर थे लेकिन संसार का इससे बड़ा झूठ क्या होगा कि उनके शव कि जगह फूल मिले। यदि इस प्रकार के चमत्कारों का खंडन किया जाए तो दुकानदारी ख़राब होने का ख़तरा रहता है। इन चमत्कारों के बल पर ही तो भोली-भाली जनता को बेवकूफ बनाकर अपना उल्लू सीधा किया जा सकता है।

किसी भी दृष्टि से ये बात उचित प्रतीत नहीं होती वो भी एक सत्यान्वेषी के लिए। ऐसे चमत्कार सुने तो जाते हैं देखे नहीं जाते। यह संभव ही नहीं है फिर क्यों ऐसी अनर्गल बातों को साहित्य के ज़रिए प्रचारित-प्रसारित किया जाता है? इन बेतुकी बातों का खण्डन क्यों नहीं किया जाता? जहाँ पर मृतक का दाह-संस्कार करने की प्रथा है वहाँ दाह-संस्कार के बाद अगले किसी दिन फूल चुनने की रस्म होती है। फूल चुनना वास्तव में उन अस्थियों के चुनने को कहते हैं जो जलकर छोटी रह जाती हैं अथवा जलने से बच जाती हैं। उन्हें किसी पवित्र नदी या सरोवर में प्रवाहित या विसर्जित कर दिया जाता है इस आशय के साथ कि इससे मृतक को मोक्ष की प्राप्ति होगी। हो सकता है कि उनके अस्थि-अवशेषों को जिन्हें फूल कहा जाता है हिंदुओं और मुसलमानों ने आधा-आधा बाँट लिया हो और हिंदुओं ने अपने आधे फूलों अथवा दग्धावशेषों को किसी नदी में प्रवाहित कर दिया हो तथा मुसलमानों ने आधे फूलों अथवा दग्धावशेषों को दफ़ना दिया हो।

जो भी हो कोई शव कभी फूलों में परिवर्तित नहीं हो सकता। इस प्रकार की अनर्गल बातों से आप समझते हैं कि कबीर का रुतबा बढ़ेगा? कभी नहीं। कबीर तो वास्तव में वीतरागी हो चुके थे। वो राग-द्वेष, लाभ-हानि, सुख-दुख व जीवन-मरण से ही नहीं मोक्ष अथवा बंधन से भी निरपेक्ष हो चुके थे। कबीर का जन्म काशी में हुआ था और वहीं रहते थे। कहते हैं जो काशी में मरता है उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। लोग अपने अंतिम समय में इसी तथाकथित मोक्ष की आकांक्षा लिए काशी में आ बसते हैं। कबीर अपने अंतिम दिनों

में काशी छोड़कर मगहर में जा बसे थे। उस मगहर में जिसके बारे में प्रसिद्ध है कि वहाँ जो मरता है उसको मुक्ति नहीं मिलती। कबीर इस भ्रम को तोड़ने के लिए ही अपने अंतिम समय में मगहर में जा बसे। अपने इस क्रांतिकारी कृत्य के द्वारा उन्होंने जो संदेश दिया क्या हमने उसे आत्मसात किया? क्या आज का शिक्षित वर्ग भी उसको महत्त्व देता है? यदि नहीं तो कबीर पर शोध करने का भी कोई औचित्य नहीं दिखलाई पड़ता।

कबीर पुनर्जन्म के लिए नहीं, वर्तमान जन्म में सुधार के लिए चिंतित व प्रयासरत थे। उनकी मृत्यु से जुड़े चमत्कारी प्रसंग उनकी जीवन भर की साधना को निरर्थक व उनकी महत्ता को कम कर देते हैं। एक सत्यान्वेषी का मूल्यांकन करते समय सत्य की उपेक्षा कैसे की जा सकती है? कबीर के साहित्य की चर्चा करते समय ही नहीं उनके जीवन व मृत्यु के संबंध में चर्चा करते समय भी हमें अत्यंत संतुलित, वैज्ञानिक व व्यावहारिक दृष्टिकोण का परिचय देना चाहिए। कबीर जो सैकड़ों वर्ष पूर्व कह गए वो आज भी हमारी समझ में क्यों नहीं आता? यदि हम आज भी अंधविश्वास और पाखंड में लिप्त हैं तो ऐसे में कबीर के दोहे रटने का कोई औचित्य नहीं। कबीर जयंती के आयोजन की प्रासंगिकता इसी में है कि हम न केवल कबीर की तरह निर्भीक व सत्यान्वेषी बनें अपितु कबीर को ठीक से समझकर स्वयं को अंधविश्वास व पाखण्ड से मुक्त कर स्वयं में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करें।

सीताराम गुप्ता,
ए.डी. 106 सी., पीतमपुरा,
दिल्ली - 110034
मोबा0 नं0 9555622323
email : srgupta54@yahoo.co.in